ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-4* Issue-12* March- 2020
Anthology : The Research

वर्तमान परिदृष्य और नारी सशक्तिकरण

सुनीता मसराम
प्राध्यापक – हिन्दी
शासकीय कन्या महाविद्यालय
कटनी (म0प्र0), भारत

सारांश

पिछले दो दशकों ने इस युग की शिक्षा और चेतना के आयाम बदले हैं, और साथ ही बदला हैं समाज का नारी के प्रति नजरियॉ, किन्तु नारी ने यह बदलाव सहज ही प्राप्त नही किया हैं, उसने अपने दम पर यह स्थान प्राप्त किया हैं, इतना ही नही उन्होने उन क्षेत्रों मे भी दखल दिया हैं, जिन पर सदियों से पुरूषों का सनातन् प्राधिकार था अर्थात धर्म – "काजी" और महिला? आपको आश्चर्य हुआ न, पर ये सच हैं, यह साहस किया पूर्वी मिदनापुर जिले के नंदीग्राम की शबनम आरा बेगम ने। सन् 2003 में जब शबनम काजी बनी तो उनकी उम्र थी सिर्फ 25 वर्ष ऐसा नही की उसने काजी बनना तय किया और बन गई, बल्कि काफी संघर्ष बाद ही वह यह मुकाम हासिल कर पाई, अपने पिता की मदद करते–करते उसे शरियत का अच्छा खासा ज्ञान हो गया और वह अपने अब्बा की नायब काजी हो गई अब्बा की मौत के बाद उसने काजी बनने का फैसला किया और वही से उसके संघर्ष का दौर प्रारंभ होता हैं, किन्तु लंबे संघर्ष के बाद जीत अन्ततः शबनम की हुई और उसे पहली महिला काजी होने का गौरव प्राप्त हुआ। शबनम आज तक सैकड़ो निकाह करवा चुकी हैं, और सम्मान जनक जीवन बीता रही हैं।

इसी तरह हिन्दुओं मे पुरोहिती का काम अनंत काल से पुरूषों का ही रहा हैं लेकिन बनारस में लड़कियों ने पुरूषों के इस बर्चस्व को भी भेद दिया हैं, एक गार्गी ने सदियों पहले यह परंपरा तोड़ी थी आज सैकड़ो लड़किया गार्गी के नक्शे कदम पर चल पड़ी हैं, इन्होने सफलता पूर्वक शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण की हैं, और पुरोहिती को पेशे के तौर पर चुना हैं अनेक विरोधों को सहकर अपने शुद्ध एवं मधुर उच्चारण के साथ उनके यजमानों की संख्या बनारस ही नही बनारस के बाहर भी बढ़ने लगी हैं।

प्रस्तावना

हिन्दी की प्रसिद्व लेखिका अनामिका कहती हैं कि – "बीते कुछ वर्षो में जो बदलाव आया हैं वह यह है कि कआज स्त्री के परिवार में रक्त संबंध, यौन संबंध से जुड़े हुये लोग ही नही हैं, अनमें उनके सहयोगी और मित्र भी शामिल हुए हैं।" कहना ही होगा कि स्त्री को लेकर सोच में काफी बदलाव आया हैं, अब उन्हे उनके काम और दिमाग से ही पहचाना जाता हैं।

नारी केन्द्रित उपन्यासों की लेखिका, और नारी स्वतंत्रता की प्रखर प्रवक्ता मैत्रेयी पुष्पा का मानना हैं कि – पिछले बीस वर्षो के जीवन में नारी को तीन चीजों ने अत्यधिक प्रभावित किया हैं – परिवार नियोजन, गैस और कुकर, और मोबाईल फोन , पहले महिलाऍ अधिक बच्चों के जन्म के कारण अपना स्वास्थ्य खो बैठती थी दिनभर रसोई में खटना पड़ता था आज इनसे छुटकारा मिल चुका हैं, आज बहुऍ मायके से साड़ी और गहने की बजाय मोबाईल फोन मॉगने लगी हैं ताकि अपना दुःख दर्द बता सके । घूंघट के अंदर से फोन पर पति की शिकायत, करने की सुविधा उन्हे मोबाईल फोन ने ही दी हैं।

एक सर्वे रिपोर्ट के अनुसार देश मे नारी शिक्षा वर्तमान में बढ़कर 15.33 फीसदी हुई । यह संख्या 1971 तक और बढ़ते हुए 21.97% हुई 1981 में हुई जनगणना के आधार पर 28.47 तक पहुंच गई सकारात्मक बदलाव यह आया हैं कि 2001 की जनगणना के अनुसार के आधार पर देश के कुल स्नातकों में एक तिहाई महिलायें थी और आज संभवतयः स्थिति और बेहतर हुई होगी, यह बदलाव सभी क्षेत्रों में जैसे कृषि कार्य,

मजदूरी, और तथा कथित श्रम के अकुशल क्षेत्रों में खून–पसीना बहाने के अलावा चिकित्सा, अध्यापन,इंजिनियरिंग, मीडिया प्रबंधन, अनुसंधान, खेलकूद, राजनीति, कानून, विज्ञान, खगोलशास्त्र, मार्केटिंग, बैंकिग, पर्यटन, सिनेमा, प्रशासनिक सेवा जैसे अति दक्षता वाले क्षेत्रों में भी नारियों को अपनी मजबूत मौजूदगी दर्ज करते देखा जा सकता है।

इसके बावजूद क्या कारण हैं कि भारतीय नारी को वह स्थिति प्राप्त नही हुई है जिसकी वह हकदार हैं, महिलाओं की स्थिति में अभी भी पूर्णतः परिवर्तन होना बाकी हैं, हाल ही में एक राष्ट्रीय दैनिक साप्ताहिक परिशिष्ट महिला विषयक मुद्दो पर केन्द्रित था, इसी परिशिष्ट के एक बॉक्स में लेखक ने दावा किया था कि भारत में **"हाउस वाइव्स यानी (गृहणियां) गृहणियों की यह अंतिम पीढ़ी हैं"** क्या यह सच हैं? शायद नही क्योकि एक वर्ग के लिए यह सच हो सकता हैं किन्तु भारत की सभी नारियों का यह सच नही हो सकता निःसंदेह भारत की तस्वीर बदली हैं और नारी की भी तस्वीर बदली हैं लेकिन इस तस्वीर के को समझने के लिए अलग–अलग हिस्सों को देखने समझने की आवश्यकता हैं, दैनिक मध्यप्रदेश के 10 नवंबर 2012 के संपादकीय के अनुसार केन्द्रीय सांख्यिकी संस्थान की रिपोट्र बताती हैं कि आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों अथवा पूरे सार्वजनिक जीवन में नर–नारी समानता की बातें चाहे जितनी की जाती हों, मगर इस दिशा में ठोस प्रगति नही हो रही हैं। बानगी देखिए । केन्द्रीय मंत्रिमंडल में इस वक्त 74 मंत्री है और उनमें सिर्फ आठ महिलाएं हैं, सुप्रीम कोर्ट मे 26 जज हैं, उनमे सिर्फ दो महिलाएं हैं विभिन्न हाई कोर्टो के 634 न्यायाधीशों में सिर्फ 54 स्त्रियां हैं और अगर केन्द्र सरकार की तमाम नौकरियों का आंकड़ा ले तो 2009 में उनमें महिलाओं का हिस्सा सिर्फ दस फीसदी था। सबसे दुखद यह हैं कि ये आंकड़े समाज में कोई बहस खड़ी नही करते। यह मानकर चला जाता हैं कि ऐसा ही हैं, परिणाम यह हैं कि आधुनिक मूल्यों पर आधारित सबसे इंसाफ का वादा करने वाले संविधान के लागू होने के छह दशक बाद भी आधी आवादी पारंपरिक भेदभाव और अन्याय की शिकार बनी हुई हैं। नाइंसाफी का आलम यह है कि 2009–10 में 15 से 59 वर्ष के आयु वर्ग में आम पुरूषों की औसत नियमित तनख्वाह/मजदूरी जाहं 249.15 रूपए प्रतिदिन थी, वही महलाओं के लिए यह सिर्फ 155.87 रूपए थी । इसी रिपोर्ट में राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्वे से सामने आए इस आंकड़े का भी उल्लेख हैं कि ग्रामीण इलाकों में स्वास्थ्य संबंधी मामलों में सिर्फ 26 प्रतिशत महिलाएं अपने बारे में निर्णय लेने की स्थिति में थी, जबकि केवल 7.6 प्रतिशत महिलाओं ने कहा कि घरेलू खरीददारी के मामलों में उन्हे फैसला लेने का अधिकार मिलता हैं। शहरों में भी यह आंकड़ा कोई बहुत ऊंचा नही हैं। कुछ समय पहले संयुक्त राष्ट्र की लैगिक समानता इकाई की कार्यकारी निदेशक मिशेल बैसलेट ने जो रिपोर्ट रखी, उससे भी भारत में लगभग तमाम क्षेत्रों मे नर–नारी विषमता की परेशान करने वाली तस्वीर उभरी थी । इनमे वेतन/मजदूरी में अंतर जैसे पहलू तो सीधे देश के कानून का उल्लंघन हैं। दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि कानून लागू करने वाली एजेंसियों के भीतर भी ऐसा पूर्वग्रह पैठा है कि ऐसे मामलों मे कोई प्रभावी कार्यवाही नही होती ।

दैनिक भास्कर 11 नवंबर 2012 के समाचार में प्रकाशित "**न घूंघट उठा, न जुबान खुली** 183 करोड़ की योजना मंजूर समाचार महिला सशक्तिकरण की वर्तमान यर्थाथ स्थिति को प्रस्तुत करता हैं।
प्रसिद्ध कवयित्री रश्मि बजाज की हरियाणा की लड़कियों के बारे में एक कविता की पंक्ति हैं– "वाह री मेरी रवायत, आसमान पर कल्पना चावला और जमीन पर खाप पंचायत।"

ऑल इंडिया डेमोक्रिटक मिन्स ऑर्गेनाइजेशन की नेत्री और हरियाणा और पश्चिमी उत्तर–प्रदेश में खाप पंचायतों के फरमानों व ऑनर–किलिंग्स के विरूद्ध और महिला अधिकारों के समर्थन में सबसे मुखर आवाज का नाम है जगमति सांगवान। जगमति पिछले कुछ सालों में आए बदलावों को भिन्न तरीके से देखती हैं। उनका कहना हैं कि मीडिया औरतों और लड़कियों के बारे में जितनी ग्लैमरस तस्वीर पेश करता हैं स्थिति वैसी नही हैं, बल्कि जमीनी स्तर पर एक लड़की के लिए संघर्ष बढ़ा हैं। उदाहरण के लिए देश के विकसित प्रांतो में भ्रूण–हत्याएं बढ़ी हैं और लिंगानुपात घटा हैं। यह सही हैं कि उच्च–शिक्षा में लड़कियों के लिए मौके बढ़े हैं, उनकी संख्या भी बढ़ी हैं, लेकिन साथ ही यह भी सच हैं कि शिक्षा महंगी हुई हैं और पढ़ाई में कटौती लड़की के हिस्से ही आती हैं।

संगठित–क्षेत्र मे रोजगार में कमी आई हैं और असंगठित क्षेत्र मे कोई श्रम–कानून नही हैं। कॉल–सेंटर , प्राइवेट स्कूलों, अस्पतालों, फैक्टरियों और ऐसे ही अन्य स्थानों पर बेहद कम वेतन पर लड़कियां हाड–तोड़ मेहन कर रही हैं।

इस सबके बावजूद शहरों में लड़कियों को एक्सपोजर तो अवश्य मिला हैं, उनकी एस्पिरेशनस भी बढ़ी हैं। बदलते परिवेश में लड़कियां अपनी मुकम्मल पहचान स्थापित करने के लिए संघर्ष कर रही हैं, टकरा रही हैं। यह बदलाव प्रशंसनीय और सकारात्मक हैं पर हमें यह नही भूलना चाहिए कि जहां एक ओर शाईनिंग इंडिया हैं वही दूसरी और सफरिंग इंडिया भी हैं।

कुल मिलाकर देखा जाये तो भारत में नारियों की जो स्थिति सामने आती हैं, वह उम्मीद जगाती हैं, वर्तमान में नारी परंपरागत बन्धनों से पूर्णतः मुक्त भले

ही न हुई हो लेकिन इसके बावजूद उन्होने ने अपनी पहचान के नई क्षितीज अवश्य स्थापित किया हैं, और आज उसे यह कहने की आवश्कता नही हैं कि **"अगले जनम में मोही बिटिया न कीजों"**

संदर्भ सूची :

1. कामकाजी महिलाएं, वास्तविक स्थिति – डॉ0 रेणु त्रिपाठी, डॉ0 अपर्णा त्रिपाठी
2. भारतीय महिलाएं एक विश्लेषण – डॉ0 वीणा गर्ग
3. अहा! जिंदगी – दिसंबर 2010
4. समाचार पत्र – दैनिक भास्कर